IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

सम्राट् ललितादित्य : वैभव, सत्तामद एवं सूर्यास्त"

डॉ० पूजा ठाकुर

शिमला हिमाचल प्रदेश

संक्षिप्त शोध

प्रस्तुत शोध-पत्र में कश्मीर के प्रसिद्ध सम्राट् ललितादित्य के व्यक्तित्व, शासन, राजनीतिक दृष्टिकोण, साम्राज्य-विस्तार तथा जीवन के अंतिम चरण का अध्ययन किया गया है। ललितादित्य एक शक्तिशाली एवं महत्वाकांक्षी शासक था, जिसने अपने शासनकाल में अनेक विजय प्राप्त कीं और कश्मीर की राजनीतिक प्रतिष्ठा को व्यापक बनाया। साथ ही, उसके जीवन में सत्ता के प्रभाव से उत्पन्न अहंकार तथा कुछ विवादास्पद निर्णयों के उदाहरण भी मिलते हैं। इस शोध में प्रवरपुर को जलाने की घटना, गौड़ नरेश से संबंधित प्रसंग, उसके राजनीतिक सिद्धांत, उत्तराधिकार संबंधी विचार तथा मृत्यु से जुड़ी विभिन्न मान्यताओं का विवेचन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि ललितादित्य का व्यक्तित्व केवल एक विजेता राजा तक सीमित नहीं था, बल्कि उसमें राजनीतिक दूरदृष्टि, प्रशासनिक चिंतन, महत्वाकांक्षा और मानवीय दुर्बलताओं का भी समावेश था। उसके जीवन और शासन का अध्ययन तत्कालीन कश्मीर की राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों को समझने में महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

जिस प्रकार से शांत रूप से बहने वाली विशाल नदियाँ चट्टानों पर गिरकर भयंकर कोलाहल करने लगती हैं और स्वच्छ जल वाली होकर भी वे वर्षा ऋतु में कलुषित जल वाली बन जाती हैं उसी प्रकार कभी-कभी उच्च कुल में उत्पन्न हुए महान पुरुष भी दिशा तथा देशकाल की परिस्थितियों से प्रभावित होकर अपने आचार-व्यवहार में परिवर्तन कर बैठते हैं। महाकवि कल्हण यहाँ प्रश्न उपस्थित करते हैं कि इस प्रकार की स्थिति को कलियुग काप्रभाव माना जाए अथवा राजसिंहासन एवं सत्तामद का असरजिस कारण से सम्राट् ललितादित्य जैसे सुयोग्य राजा भी ऐसे निन्दनीय कार्य कर बैठें।

कूट शब्द: सम्राट् ललितादित्य, कश्मीर, राजतरंगिणी, सत्ता, दिग्विजय, राजनीतिक नीति, उत्तराधिकार, स्वामीभक्ति।

1 प्रवरपुर नगर को जलाने का आदेश

एक बार सम्राट् अपनी नई राजधानी परिहासपुर में अपनी रानियों के साथ ठहरा हुआ था। रात्रि के समय उसने मदिरा पीकर तथा उन्मत्त होकर अपने मन्त्रियों को आज्ञा दी कि प्रवरसेन द्वारा निर्मित प्रवरपुर नगर (जम्मू कश्मीर राज्य की ग्रीष्मकालीन राजधानी श्रीनगर का नाम) अगर परिहासपुर के समान ही सुन्दर है, तो उसे जला दिया जाए। उसके मन्त्रियों के लिए अपने स्वामी के आदेश का उल्लंघन करना दुष्कर था अतः उन्होंने बातुलानक नामक स्थान पर घोड़ों के लिए रखे चारे की ढेरी में आग लगा दी। जब राजा ने अपने महल के ऊपरी सिरे सेआग की उन उज्ज्वल लपटों को देखा, तो वह बहुत प्रसन्न हुआ। परन्तु सवेरे जब उसका नशा दूर हुआ तो उसे अपने आदेश पर घोर पश्चाताप हुआ। मन्त्रियों ने जब राजा की ऐसी मनःस्थिति देखी तो उन्होंने उसका दुःख दूर करने के लिए सारी सच्ची घटना बता दी।

जब उसे यह मालूम हुआ कि प्रवरपुर जलकर नष्ट नहीं हुआ है तब वह उसी प्रकार से अत्यन्त प्रसन्न हुआ, जैसे स्वप्न में खोया पुत्र जागने पर सामने खड़ा दिखाई दे। राजा ललितादित्य ने उन मन्त्रियों के कार्य की सराहना की और उन्हें यह आदेश दिया कि नशे में यदि मैं कोई अनुचित आज्ञा दे दूँ तो उसका पालन कदापि न किया जाए। बहुत से राजसेवक अपना स्वार्थ सिद्ध करने अथवा सुख प्राप्ति के लिए इस पृथ्वी रूपी वेश्या का थोड़े समय उपयोग करने वाले स्वामी को अनुचित व्यसनों में फँसाकर उसे पतित बना देते हैं इसके विपरीत जो जीवन की अपेक्षा किए बिना स्वामी को कुमार्ग से रोकता है ऐसे ही विवेकवान् भृत्यों के पुण्य से पृथिवी पुनीत मानी जाती है।[1]

2 परिहासपुर नगर दुर्घटना

राजतरङ्गिणी के अनुसार देवराज इन्द्र से भी अधिक प्रभावशाली उस राजा ललितादित्य के द्वारा एक अन्य ऐसा अनुचित कार्य हो गया, जिस कार्य को करके एक शुद्ध प्रकृति का राजा भी लज्जित होता है। एक बार राजा ने भगवान् परिहासकेशव को मध्यस्थ बनाकर गौड़े देश नरेश को अभयदान दिया, परन्तु बाद में तीक्ष्ण नाम के एक गुप्तचर द्वारा उसका वध करवाया। उस गौड़ राजा के सेवकों ने अपने स्वामी के लिए अपने प्राणों की चिन्ता किए बिना बदला लेने के लिए निकले। शारदा देवी का दर्शन करने के बहाने से उन्होंने कश्मीर में प्रवेश किया एवं नगर के मध्य में स्थित परिहासकेशव के मन्दिर को चारों ओर से घेर लिया। उस समय राजा ललितादित्य विदेश में था। अतः उपद्रव करने के लिए घुसते हुए गौड़ सेवकों को देखकर पुजारियों ने द्वार बन्द करके राजा के प्रिय परिहासकेशव की रक्षा की।

तब वे पराक्रमी गौड़ सेवक परिहासकेशव के भ्रम में रामस्वामी के मन्दिर पर चढ़ गए और वहां पर बनी हुई रजतमयी प्रतिमा को तोड़-मोड़कर नष्ट कर दिया। उस रामस्वामी की मूर्ति को उन्होंने तिल-तिल करके चारों ओर छितर दिया। उनके इस महान् अपराध से कुपित होकर राज्य के सैनिक उनका वध करने लगे। उस समय रक्त से नहाये हुए वे काले-काले गौड़ सेवक गेरु वर्ण के अंजन पर्वत के शिलाखण्डों के समान दिख रहे थे। उन वीरों के रुधिर प्रवाह से धरती एवं उनकी अनुपम स्वामी भक्ति दोनों का ही मुख उज्ज्वल हो गया और वे दोनों धन्य हो गयीं।

उन गौड़ सेवकों का स्वामी मृत्यु को प्राप्त हो चुका था और स्वदेश लौटने के लिए उन्हें कश्मीर से बहुत लम्बा मार्ग तय करना था। ऐसी भीषण विपत्ति में भी उन्होंने स्वामी भक्ति का एक अनूठा आदर्श प्रस्तुत किया।

ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करना विधाता के लिए भी असाध्य ही होगा, उन दिनों राजाओं के यहां इसी प्रकार की लोकोत्तर स्वामी भक्ति प्रदर्शित करने वाले सेवक रहा करते थे। इस प्रकार उन गौड़ सेवक रूपी राक्षसों के उपद्रव में रामस्वामी के पुनीत बलिदान से राजा के परम प्रिय भगवान् परिहास केशव की रक्षा हुई। अब भी कश्मीर में रामस्वामी का भग्न मंदिर वैभवहीन तथा सूने खंडहर जैसा दिखाई देता है।[2] डॉ0 विशुद्धानन्द पाठक भी लिखते हैं कि राजा ललितादित्य ने गौड़ नरेश को निर्बाध रूप से कश्मीर आने का निमन्त्रण देकर बीच में ही धोखे से मरवा दिया था।[3]

3 सम्राट् ललितादित्य का अन्तिम सन्देश

राजतरङ्गिणी के अनुसार अपने शासनकाल के अन्तिम समय में सम्राट् ललितादित्य उत्तरापथ के उन देशों पर विजय प्राप्त करने के लिए निकला था, जहाँ उससे पूर्व कोई नहीं गया था। वहां उसे उन राक्षसों के साथ बहुत सारे साहसिक कार्य करने पड़े, जिन्हें कुबेरादि देवताओं ने उसकी शक्ति-परीक्षा के लिए भेजा था। इस प्रकार उत्तरापथ पर गए हुए उस राजा को बहुत समय तक जब कोई समाचार नहीं मिला, तो मन्त्रियों ने उसका समाचार लेने के लिए एवं उसे स्वदेश बुलाने के लिए एक दूत को भेजा। उसी दूत के माध्यम से राजा ने मन्त्रियों के पास अपना अन्तिम सन्देश भेजा कि इतनी दूर आ जाने के पश्चात् अब मेरे लौटने का मोह व्यर्थ है, प्रतिदिन नयी-नयी विजय प्राप्त करना छोड़कर स्वदेश लौटना अर्थहीन है क्योंकि नदियां अपना उद्गम स्थान छोड़कर अपने अन्तिम लक्ष्य समुद्र की तरफ जाती हैं, और अग्रसर होती हैं। अतः वास्तविक विजेता का कोई अन्तिम लक्ष्य नहीं होता है।[4]

4 राजनीतिक सिद्धान्त सम्बधित घोषणा-पत्र

राजतरङ्गिणी के अनुसार राजा ललितादित्य ने अपनी अनुपस्थिति में मन्त्रियों को शासन संचालन के कुछ सिद्धान्त बताये, जो उस समय के लिए आवश्यक रहे होंगे, जिनका अनुसरण करके वे निर्भय भाव से राज्य चला सकेंगे। उसके अनुसार राष्ट्र में जो सत्ता सम्पन्न होना चाहते हैं, उन्हें सबसे पहले आन्तरिक संघर्षों से बचकर रहना चाहिए अर्थात् राज्यकार्य में लगे अधिकारियों से हमेशा अपने भेद की रक्षा करनी चाहिए क्योंकि उन्हें चार्वाक मतानुयायी नास्तिकों के समान परलोक से भय नहीं लगता। राज्य के दुर्लंघ्य पहाड़ी प्रदेशों में रहने वाले निवासियों को बिना किसी अपराध के भी दण्ड देते रहना चाहिए, क्योंकि दृढ़ निवास में सुरक्षित रहने के कारण वे धनवान् बनकर हमारे वश से बाहर हो जाएंगे। इसलिए दण्ड द्वारा ही उन्हें वश में रखा जा सकता है। इस बात का हर साध्य प्रयत्न से पालन होना चाहिए कि किसानों के पास न तो एक वर्ष से अधिक खाद्य-सामग्री संग्रह और न ही खेती के लिए आवश्यकता से अधिक बैल उनके पास रहने चाहिए। इससे अधिक होने पर वे प्रबल, क्रूर, डामर, हठी तथा दुःखदायी हो जाएँगे और राजाज्ञा की अवहेलना करने लगेंगे।

जब नगरवासियों की भांति गांव वालों के पास भी पर्याप्त वस्त्र, स्त्रियां, ऊनी, कपड़े, खाद-सामग्री, आभूषण, घोड़े, आवास आदि संचित हो जाएं, राजा अत्यन्त रक्षणीय दुर्गों की रक्षा न करें, जब उनके राजसेवक अपना विवेक खो बैठें, जब सेना की भर्ती एक ही क्षेत्र से होने लगे, जब वैवाहिक सम्बन्धों द्वारा राजपुरुष एक-दूसरे के निकट सम्पर्क में आने लगे, जब राजा कायस्थों की भांति कार्यालय का कार्य करने लगें, तब यह निश्चित समझना चाहिए कि प्रजा के दुर्भाग्य का समय उदय हो गया है।[5]

5 इच्छापत्र (वसीयतनामा)

अपने संदेश के अन्तिम भाग में सम्राट् ने अपने बाद राज्य के उत्तराधिकार की व्यवस्था की। उसने कहा कि जिस प्रकार हवा के साथ उड़ती हुई गन्ध से पागल हाथी का समीप होना सूचित होता है, उसी प्रकार किसी पुरुष की अपरिवर्तनीय मानसिक दशा, जो उसके पूर्वजन्म के संचित कर्मों का फल हो जाती है, अतः चिन्तनशील पुरुष उसकी वास्तविकता को जानने की चेष्टा करें। कुवलयादित्य एवं वज्रादित्य समान रूप से मेरे पुत्र हैं, परन्तु भिन्न माताओं से उत्पन्न होने के कारण उनके चरित्र भी एक-दूसरे से अलग हैं। इन दोनों में बड़े पुत्र को राज्याधिकार प्राप्त होना चाहिये, परन्तु यदि वह अपना प्रचण्ड स्वभाव प्रदर्शित करे, तो आप लोग उसके विरुद्ध कार्यवाही करके उसे राज्यच्युत कर दें।

राज्योच्युत करने से यदि वह दुःखी होकर राज्य से बाहर चला जाए या प्राण त्याग दे, तो उसके लिए किसी भी प्रकार का शोक न करें। मेरे छोटे पुत्र वज्रादित्य को कदापि राज्य न दिया जाए, यदि निर्णय की भूल से उसे राज्याधिकार प्राप्त हो जाए तो उसकी आज्ञाओं का पालन किया जाए एवं चरित्रहीन होने पर भी उसकी रक्षा की जाए। मेरे सबसे छोटे पुत्र जयापीड जो अभी बहुत-छोटा बालक है उसको सदैव अपने पितामह का अनुकरण करने के लिए कहा जाए।[6]

6 मृत्यु

सम्राट् ललितादित्य की मृत्यु के विषय में भी उसके जीवन की तरह ही अनेक किंवदन्तियाँ प्रचलित हो गयी थीं जिसका कारण उसकी मृत्यु का विदेश में होना था। कुछ विद्वानों का कहना था कि आर्याणक देश (ईरान) में अचानक से घोर हिमपात होने के कारण वह राजा उसी में दबकर मृत्यु को प्राप्त हुआ था। दूसरा मत है कि बहुत दिनों से संचित अपनी कीर्ति की रक्षा करने के लिए भविष्य में आने वाली किसी अपरिहार्य विपत्ति के भय से वह आग में जलकर मर गया। इस मत से सम्बन्धित कथा सप्तम तरङ्ग में मिलती है कि प्राचीन समय मुक्तापीड/ललितादित्य अपर नाम का राजा बहुत सारे राजाओं को युद्ध में पराजित करके उनके लिए मुश्किलें खड़ी कर रहा था, तो शत्रुओं ने मौका देखकर उसके प्राण-संकट में डाल दिए। राजा जब उत्तरापथ पर विजय के लिए निकला था तो एक दिन वह सुरक्षा की दृष्टि से जगह-जगह सैनिक तैनात करके निश्चिन्त होकर जब अपने कुछ अनुचरों के साथ घूम रहा था। उसी समय किसी दुर्गम स्थान पर शत्रुओं ने उसे घेर लिया।

युद्धोपयोगी सामग्री की कमी के कारण राजा मुक्तापीड को राजा शत्रु ने आठ लाख घुड़ सवारों की सेना के साथ कैद कर लेने की प्रतिज्ञा की। उस समय साम-दाम आदि उपायों द्वारा कोई भी हल न निकलता देख कर राजा ने अपने मन्त्री शिवस्वामी से समयानुकूल उपाय पूछा। प्रधानमन्त्री ने भी उस भीषण संकट से बाहर आने का कोई उपाय न देखते हुए उचित कर्तव्य निर्धारण करके राजा से कहा - अपने निष्कलंक यश का अभिमान रखने वाले मनस्वी पुरुषों के लोभ तथा क्षोभ शून्य हृदय में विराजमान अंकुंठित प्रतिभा ही युक्ति संगत कर्तव्य सूझा दिया करती हैं। जीवन में संचित ख्याति को सुरक्षित रखना ही कर्मठ एवं बुद्धिमान मनुष्यों का कर्तव्य है, साम्राज्य उपार्जन आदि तो गौण है जैसे जलता हुआ कपूर अपनी सुगन्ध से पहचाना जाता है उसी प्रकार शरीर नष्ट हो जाने पर भस्मावशिष्ट प्राणी अपनी ख्याति द्वारा याद किया जाता है।

इस प्रकार उस मन्त्री को अपनी यश एवं प्रतिष्ठा की रक्षा करने की सलाह दी और कहा कि हे महाराज! पूर्व में आपने जिन भोगों का उपभोग किया था, वे सर्व प्रायः नष्ट हो चुके हैं, ऐसा सोचकर आप अपने प्राण पण से अपनी प्रतिष्ठा और महत्व की रक्षा करें और उसे शीघ्र परिणामी दण्डकालसक रोग हो जाने का बहाना करने को कहा। राजा ने भी मन्त्री कथानुसार दण्डकालसक का बहाना किया और जोर-जोर से कराहना आरम्भ कर दिया और मरणासन्न स्थिति प्रदर्शित करता हुआ छटपटाने लगा। जब स्वेदन, संवाहन एवं वमन आदि उपचारों से भी उसका रोग शान्त नहीं हुआ तो लोगों की धारणा बन गई कि राजा अब अवश्य ही मर जाएगा। वह उपाय बतलाने वाला मन्त्री कृतज्ञता प्रदर्शित करता हुआ अग्नि में जल गया क्योंकि उसने भी अपने स्वामी की मृत्यु निश्चित समझ ली थी। ऐसा करके मन्त्री ने अपने स्वामी को रोग अथवा संकट से बचने का उपाय शब्दों द्वारा न बताकर कर्तव्य द्वारा करके दिखाया।

तदनन्तर राजा ने भी यह कहकर कि मैं भीषण वेदना सहने में असमर्थ हूँ। ऐसा कहकर अभिमान के साथ अग्नि प्रवेश किया। इस प्रकार उस मनस्वी राजा मुक्तापीड ने अपनी कुख्याति से बचने के लिए प्राणों की भी उपेक्षा करके स्वर्ग सिधार गया। कुछ इतिहासकारों के मतानुसार वह राजा मनुष्यों के लिए दुर्लभ देवताओं के लिए सुलभ उत्तरापथ में सेना समेत पृथिवी में समा गया। इस प्रकार उसके अन्त के विषय में बहुत-सी धारणायें मिलती हैं जिस प्रकार सांयकाल होने पर सूर्यास्त के विषय में कुछ कहते हैं - सूर्य अस्त हो गया, कुछ कहते हैं - सूर्य अस्ताचल को गया, कोई कहता है, सूर्य समुद्र में डूब गया, कोई कहता है - अग्नि में प्रवेश हो गया। इसी प्रकार महापुरुषों का अन्तकाल होता है तो उनके विषय में विचित्र प्रकार की कथायें प्रचलित हो जाती हैं। इस प्रकार उस महान् दिग्विजयी सम्राट् ने 36 वर्ष सात माह ग्यारह दिन कश्मीर पर शासन किया और अन्ततः मृत्यु को प्राप्त हुआ था।

सम्राट् ललितादित्य के पश्चात् उसकी आज्ञानुसार इन्द्र के समान कमलादेवी से उत्पन्न उसका पुत्र कुवलयापीड ने राजपाठ सम्भाला जिस प्रकार से सर्पगण अपनी केंचुली त्यागकर तेजस्वी हो जाते हैं, उसी प्रकार उसने अपने त्याग द्वारा लक्ष्मी की मलीनता को भी दूर करके उसे निर्मल बना दिया। [7]

निष्कर्ष

सम्राट् ललितादित्य कश्मीर के एक शक्तिशाली, पराक्रमी और महत्वाकांक्षी शासक थे। उनके शासनकाल में कश्मीर ने राजनीतिक एवं सैन्य दृष्टि से महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त की। उनके जीवन में जहाँ दिग्विजय, प्रशासनिक क्षमता और राजनीतिक दूरदृष्टि दिखाई देती है, वहीं सत्ता के प्रभाव से उत्पन्न कुछ विवादास्पद निर्णय भी सामने आते हैं। उनकी शासन-नीति और उत्तराधिकार संबंधी विचार तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था की जटिलताओं को स्पष्ट करते हैं। उनकी मृत्यु के संबंध में विभिन्न मत और किंवदंतियाँ उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व को दर्शाती हैं। अतः ललितादित्य का जीवन वैभव, शक्ति, महत्वाकांक्षा और मानवीय कमजोरियों का समन्वित रूप प्रस्तुत करता है तथा कश्मीर के इतिहास को समझने में उनका स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है।

---

1 राजतरङ्गिणी : व्याख्याकार : श्रीरामतेजशास्त्री पाण्डेय, प्रकाशक : चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली, पुनर्मुदित संस्करण : 2019

2 वही० ।

3 उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास : लेखक : डॉ० विश्वनाथ प्रसाद पाठक, प्रकाशक : उत्तर प्रदेश शासन राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ

4 राजतरङ्गिणी : व्याख्याकार : श्रीरामतेजशास्त्री पाण्डेय, प्रकाशक : चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली, पुनर्मुदित संस्करण : 2019

5वही०।

6 वही ० ।

7 वही ०।